प्राचीन हिन्दू संस्कारों का समकालीन भारतीय समाज में महत्त्व

डॉ० कामना शुक्ला
एसोशियेट प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष
प्राचीन इतिहास
कृपालु महिला महाविद्यालय, कुंडा-प्रतापगढ़

सारांश

हिन्दू समाज में संस्कार का संयोजित विधान प्राचीन काल से ही रहा है। जीवन में इसका संयोजन इसलिए किया गया कि मनुष्य का वैयक्तिक और सामाजिक विकास हो सके तथा उसका दैहिक और भौतिक जीवन सुव्यवस्थित हो सके। प्राचीन भारतीय जन-जीवन संस्कारों से बँधा हुआ है। संस्कार व्यक्ति को संगठित और अनुशासित करने के विभिन्न उपाय थे जिससे वह समाज में रहकर सुखमय जीवन व्यतीत कर सके। उनसे व्यक्ति और समाज दोनों का ही हित होता था। संस्कार धार्मिक एवं कर्मकाण्ड कार्यों के रूप में जन्म से मरण पर्यन्त किये जाते थे। व्यक्ति के असंस्कारित स्वरूप को सुसंस्कृत और अनुशासित करने के निमित्त संस्कारों की नियोजना की गयी। अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य के जीवन पर अपना कुप्रभाव डालने वाले अदृश्य विद्वानों से निरापद होने के लिए ही संस्कारों का निर्धारण हुआ। शुद्धता, आस्तिकता, धार्मिकता और पवित्रता संस्कार की प्रधान विशेषताएँ मानी गयी हैं। धर्म, यज्ञ और कर्मकाण्ड इसका मूलाधार रहा। मनुष्य का आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन संस्कारों की निष्पन्नता से प्रभावित होता रहा। अतः इस संस्कार का आधार धर्म है। जिसके माध्यम से मनुष्य अपने जीवन को उन्नत, परिष्कृत और सुसंस्कृत बनाता है। प्राचीन काल से आज तक हिन्दू समाज में संस्कारों को महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

मुख्यशब्द– शुद्धता, समाजीकरण, संस्कार, परिशुद्धता, आध्यात्मिक,अनुष्ठान, स्थितिस्थापक, समाविष्ट, आत्माभिव्यक्ति, परिमार्जन आदि।

प्रस्तावना–भारत में संस्कारों का उदय प्राचीन काल में हुआ जो कालक्रम से अनेक परिवर्तनों के साथ आज भी जीवन्त है। हमारे भारतीय समाज में संस्कारों के इस लम्बे इतिहास व व्यापक प्रभाव का मूल कारण वह भारतीय दर्शन है जो नैतिकता, आध्यात्मिकता तथा हृदय की शुद्धता के द्वारा व्यक्ति का समाजीकरण करने पर बल देता है। भारतीय हिन्दू समाज में मनुष्य ने अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन को सुव्यवस्थित करके पूर्णता की ओर ले जाने के लिए जिन पद्धतियों या संस्थागत व्यवस्थाओं को अपनाया 'संस्कार' उन्हीं में एक है। हम सभी यह जानते हैं कि हिन्दुओं के जीवन में धर्म का अत्यधिक महत्व है और धर्म का एक आवश्यक अंग है, परिशुद्धता और पवित्रता। इसीलिए हिन्दू धर्म ने भी धार्मिक आधार पर व्यक्ति के जीवन को परिशुद्ध तथा पवित्र बनाने के उद्देश्य से ही संस्कारों को जन्म दिया है। दूसरे शब्दों में, संस्कार धर्म पर आधारित वे पद्धति हैं जिनके द्वारा व्यक्ति के जीवन को परिशुद्ध व पवित्र बनाने का प्रयत्न किया जाता है जिससे वह मुक्ति व मोक्ष की दिशा में अग्रसर हो सके।

संस्कार शब्द का विश्लेषण विभिन्न अर्थों में किया जाता है। अंग्रेजी में संस्कार के लिए **'Caremony', 'Rite'** तथा **'Sacrament'** आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। किन्तु **Caremony** तथा **Rite** शब्द उचित प्रतीत नहीं होते हैं। **Sacrament** शब्द अधिक उपयुक्त लगता है क्योंकि इसका अर्थ है "धार्मिक विधि-विधान अथवा वह कृत्य जो आन्तरिक तथा आध्यात्मिक सौन्दर्य का वाह्य तथा दृश्य प्रतीक माना जाता है।"

संस्कार सम् उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से बना है। इसका प्रमुख उद्देश्य शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक शुद्धीकरण है। हिन्दू संस्कारों में अनेक आरम्भिक विचार, धार्मिक विधि-विधान, उनके सहवर्ती नियम तथा अनुष्ठान भी समाविष्ट हैं जिनका उद्देश्य केवल औपचारिक दैहिक संस्कार ही न होकर संस्कार्य व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार, शुद्धि और पूर्णता भी है। संस्कारों के सविधि अनुष्ठान से संस्कृत व्यक्ति में विलक्षण तथा अवर्णनीय गुणों का प्रादुर्भाव होता है। " जैमिनीय सूत्रों की व्याख्या करते हुए शबर ने लिखा है कि संस्कार वह है जिसके होने से पदार्थ या व्यक्ति किसी कार्य के योग्य बन जाता है।

इलावृत्त वर्ष के धर्म- प्रवर्ण परिवेश को स्पष्ट करते हुए मत्स्य पुराण में इस स्थान के कारणभूत उपादानों के अन्तर्गत जातकर्मादि विविध संस्कारों पर विशेष रूप से बल दिया गया है। वायु और ब्राह्मण पुराणों में जातकर्म संस्कार को शुद्धि-सुयोग का विषय माना गया है। विष्णु पुराण में संस्कार नित्य एवं नैमित्तिक उद्घोषित हैं तथा मनुष्यों के लिए वांछनीय स्वीकृत किये गये हैं। इन सभी बातों से यह स्पष्ट होता है कि संस्कारों की मूल महत्ता **संस्क्रियते अनेन इति संस्कारः** इस दृष्टि से मान्य थी। याज्ञवल्क्य स्मृति में विहित है कि चूड़ाकर्म आदि संस्कार पाप-अपहार के कारण हैं। मनु ने कहा है-

गार्भेgksZaमैर्जातकर्म चौडमौञ्जीनिबन्धनैः ।

बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते ।।

इसी प्रकार नैयायिकों एवं वैशेषिकों ने भी संस्कारों का अस्तित्व स्वीकार किया है। इस गुण के सम्बन्ध में उनका कहना है कि संस्कार तीन प्रकार के होते हैं- वेग, भावना और स्थिति स्थापक- वेग, पृथ्वी, जल, तेज, वायु और मन- इन पाँच द्रव्यों में रहता है। भावना शरीर आदि से अतिरिक्त आत्मा का धर्म है क्योंकि इसी के उदबोध के कारण पूर्वानुभूत वस्तुओं के स्मरण हुआ करते हैं। स्थितिस्थापक संस्कार मुख्य रूप से पृथ्वी में ही पाया जाता है। अतः सनातन संस्कारों का दार्शनिक महत्त्व भी है।

दूसरी दृष्टि से देखें तो संस्कार वे विधियाँ व धार्मिक अनुष्ठान हैं जिनके द्वारा व्यक्ति के 'अहम' का समाजीकरण एवं व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करने का प्रयत्न किया जाता है। संस्कारों के अन्तर्गत विभिन्न अनुष्ठान होते हैं जिनके माध्यम से व्यक्ति के जीवन को परिशुद्ध एवं पवित्र बनाने का प्रयास किया जाता है। इसी प्रकार संस्कार की एक और परिभाषा की गयी है कि संस्कार वास्तव में व्यक्ति की आत्म-शुद्धि एवं उसे सामाजिक दायित्वों से भली-

भाँति परिचित कराने से सम्बन्धित है। इस दृष्टि से हम देखें तो संस्कार एक धार्मिक सामाजिक प्रत्यय हैं जो व्यक्ति को अपने समाज के सांस्कृतिक जीवन का बोध कराते हैं।

इसी प्रकार **डॉ० राजबली पाण्डेय** ने भी संस्कार के विषय को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "हिन्दू संस्कारों में अनेक आरम्भिक विचार, धार्मिक विधि-विधान, उनके सहवर्ती नियम तथा अनुष्ठान भी समाविष्ट हैं जिनका उद्देश्य केवल औपचारिक दैहिक संस्कार ही न होकर, व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार, शुद्धि एवं पूर्णता भी है। अतः हिन्दुओं का सम्पूर्ण जीवन इन्हीं संस्कारों से आबद्ध है और इन संस्कारों की पूर्ति के बिना जीवन पूर्ण माना ही नहीं जाता। अतः हम कह सकते हैं कि हिन्दुओं के जीवन में संस्कारों का बहुत महत्त्व है। इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि संस्कारों का मुख्य प्रयोजन मानव जीवन के सुसंस्कृत और परिमार्जित करना था पराशर ने कहा भी है-

चित्रकर्म यथानेकैर्र गैरुमील्यते शनैः ।

ब्राह्मणमपि तद्वत् स्यात् संस्कारैविधिपूर्वकम् ।।

आरंभिक काल में जो संस्कार होते थे वे शरीर एवं जीवन रक्षा के उद्देश्यों से प्रेरित होते थे किन्तु बाद के संस्कारों का उद्देश्य समाजीकरण एवं कार्य तथा स्तर की प्रक्रिया में क्रमशः प्रगति से है। हिन्दू शास्त्रों की मान्यता है कि संस्कारों के द्वारा ही सुसंस्कृत मनुष्यों का निर्माण हो सकता है।

संस्कारों का सविस्तार प्रतिपादन गृह्यसूत्रों तथा स्मृतियों में हुआ है और उपलब्ध साहित्यों में हम इनकी संख्या 10 से 40 तक देखते हैं। जैसे- हिरण्यकेशि तथा कौशिक गृह्यसूत्रों में संस्कारों की संख्या 10 मानी गयी है। इसी प्रकार खादिर और जैमिनी में 11, कौषितकि, आपस्तम्ब और गोमिल गृहसूत्रों में 12. आश्वलायन में 13, मनुस्मृति में 14, वैश्वानस ने 18 तथा गौतम ने इनकी संख्या 40 बतायी है। संख्या सम्बन्धी मतैक्य न होने पर भी प्रायः सभी धर्मशास्त्रकार संस्कारों की संख्या 16 मानते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी संस्कार विधि तथा पण्डित भीमसेन शर्मा ने अपनी षोडस संस्कार विधि में 16 (सोलह) संस्कारों का ही वर्णन किया है। ये 16 संस्कार इस प्रकार हैं-

1. गर्भाधान संस्कार	2. पुंसवन संस्कार	3. सीमन्तोन्नयन संस्कार
4. जातकर्म संस्कार	5. नामकरण संस्कार	6. निष्क्रमण संस्कार
7. अन्नप्राशन संस्कार	8. चूड़ाकर्म संस्कार	9. कर्णवेध संस्कार
10. विद्यारम्भ संस्कार	11. उपनयन संस्कार	12. वेदारम्भ संस्कार
13. केशान्त संस्कार	14. समावर्तन संस्कार	15. विवाह संस्कार

16. अन्त्येष्टि संस्कार

अतः हिंदूओ में संस्कार अत्यधिक महत्वपूर्ण है। संस्कारों की व्यापक योजना में व्यक्ति के जीवन को नियमबद्ध कर दिया गया है। इसके द्वारा मनुष्य को अपने जीवन को शुद्ध एवं परिष्कृत करने में सहायता मिलती है और व्यक्ति को भौतिक और आध्यात्मिक प्रगति में आगे बढ़ने का स्तर प्राप्त होता है। ये संस्कार एक प्रकार से आत्माभिव्यक्ति के माध्यम भी थे। सुख-दुःख को व्यक्त करने के लिए संस्कारों का अनुष्ठान किया जाता था। इन संस्कारों का सांस्कृतिक प्रयोजन भी था। प्राचीन समय में यह मान्यता थी कि अनेक प्रकार के संस्कारों को करने से शरीर की अपवित्रता दूर होती है और पैदा होते समय प्रत्येक व्यक्ति शूद्र होता है और उसका संस्कार और परिमार्जन करना आवश्यक होता है। अतः इससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय सामाजिक यवस्था में संस्कारों का विशेष महत्व था। भारतीय समाज में संस्कार बौद्धिक, सामाजिक, आध्यात्मिक उन्नति के साधन के रूप मेंअपनाये जाते थे। यद्यपि आधुनिक भारतीय समाज में इन संस्कारों का महत्व कम होता जा रहा है। परन्तु आज भी भारतीय समाज में प्राचीन व्यवस्था किसी न किसी रूप में अपनायी अवश्य जा रही है।

निष्कर्ष—प्रस्तुत लेख प्राचीन हिन्दू संस्कारों का समकालीन भारतीय समाज में महत्व का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन को दर्शाता है। यह लेख एक समालोचनात्मक अध्ययन है जिसमें संस्कारों के माध्यम से समाज को जोड़कर रखने की गहन जानकारी मिलेगी। इसमें आधुनिकता के दौड़ में हमारे समाज में हो रहे नवीन परिवर्तनों के दौरान संस्कारों के स्वरूप में परिवर्तन के लिए कुछ ठोस सुझाव व इससे भारतीय समाज को बेहतर तरीके से अपनाने एवं आधुनिकता की दौड़ के साथ सन्तुलन को बनाये रखने के उपायों को सुझाव के रूप में लाना सम्मिलित है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. आचार्य आनन्द झा चार्वाक दर्शन

2. डॉ राजबली पाण्डेय	हिन्दू संस्कार
3. डॉ० मुंशीराम शर्मा	वैदिक संस्कृति और सभ्यता
4. सत्यमित्र दूबे	मनु की समाज व्यवस्था
5. सिद्धेश्वरी नारायण राय	पौराणिक धर्म एवं समाज
6. डॉ० विश्वम्भर दयाल अवस्थी	वैदिक साहित्य, संस्कृति और दर्शन
7. रवीन्द्र नाथ मुकर्जी एवं सरला दूबे	भारतीय सामाजिक संस्थाएँ
8. डॉ० मीना कुमारी	मनुस्मृति
9. गुप्ता एवं शर्मा	भारतीय समाज तथा संस्कृति
10. एम० एल० गुप्ता एवं डी० डी० शर्मा	भारतीय समाज और सामाजिक संस्थाएँ
11. डॉ० उपेन्द्र मोहन पाण्डेय	सामाजिक तथा आर्थिक जीवन
12. पी० वी० काणे	धर्म शास्त्र का इतिहास
13. डॉ० जे० एस० मिश्र	भारत का सामाजिक इतिहास
14. पण्डित पी० एन० पट्टाभिराम शास्त्री	संस्कार विज्ञान
15. डॉ० आर० एन० सक्सेना	भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थाएँ
16. पराशर	पराशर स्मृति
17. याज्ञवल्क्य	याज्ञवल्क्य स्मृति
18. पण्डित गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी	वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति
19. राधा कमल मुकर्जी	भारतीय समाज विन्यास
20. डॉ० डब्लू० एच० आर० रिवर्स	सामाजिक संगठन
21. डॉ० कैलाश नाथ शर्मा	भारतीय समाज व संस्कृति
22. श्यामाचरण दूबे	मानव और संस्कृति
23. लूसी मेयर	सामाजिक नृविज्ञान की भूमिका (हिन्दी)

1. प्राचीन भारत में स्थापित संस्कारों के महत्व को स्पष्ट करना।

2. देश की जनता को संस्कार के उद्देश्यों, कार्यों एवं प्रभाव से जनता को परिचित कराना।

3. प्राचीन भारत में स्थापित संस्कारों के आधारभूत स्तम्भों की व्याख्या करना।

4. संस्कारों के संबंध में सनातन कालीन चिन्तन का मूल्यांकन करना।

5. आधुनिकता की दौड़ से भी संस्कारों को जोड़ने वाले मजबूत कारकों को स्पष्ट करना ।

6. प्राचीन संस्कारों का गुण-दोष के आधार पर विश्लेषण करना।

7. समकालीन भारतीय समाज में संस्कारों के महत्व का वर्णन करना।

8. संस्कारों के आधार पर वर्तमान समाज को मिलने वाले लाभों को रेखांकित करना।